मलयालम कवयित्री सुगताकुमारी और उनका काव्य-संसार

Dr. K R. SASIDHARAN PILLAI

आधुनिक मलयालम की विख्यात कवयित्री श्रीमती सुगता कुमारी को नयी कविता के क्षेत्र में समुन्नत एवं समादरणीय स्थान प्राप्त हुआ है। अस्तित्ववादी विचारों के साथ साथ रूमानी काव्य की अतिशय वैयक्तिकता, विषाद, भावात्मकता, काल्पनिकता, रहस्यात्मकता आदि तत्व भी सुगताकुमारी के काव्य में उन्मिषित हुए है। अर्थात् मलयालम के आशान, शंकर कुरुप, चङ्गम्पुषा, वैलिप्पिल्लि, बालामणियम्मा, पी. कुञ्जिरामन नायर आदि श्रेष्ठ रूमानी कवियों और अय्यप्प पणिक्कर, माधवन अय्यप्पत्तु, कटम्मनिट्टा, सच्चिदानंदन, मेत्तिल राधाकृष्णन आदि नये कवियों के बीच एक सेतु के रूप में शोभित सुगताकुमारी के काव्य को मलयालम में इस समय अधिक सम्मान प्राप्त हो रहा है। केरल साहित्य अकादमी का पुरस्कार उन्हें पहले मिला था। उनके 'रात्रिमपा' नामक काव्य संग्रह को सन् 1978 की सर्वोत्कृष्ट मलयालम कृति होने के नाते केन्द्र साहित्य अकादमी का पुरस्कार भी मिला।

संक्षिप्त जीवनी :— मलयालम साहित्य के पिछले युग के प्रसिद्ध कवि श्री बोधेश्वरन और संस्कृत प्रोफेसर श्रीमती कात्यायिनी अम्मा की तृतीय पुत्री है सुगताकुमारी। इनका जन्म सन् 1934 में हुआ। पिताजी की देश-प्रेम से ओतप्रोत कविताएँ और माँ-बाप की पाण्डित्यपूर्ण चर्चाएँ सुनकर सुगता पली, विचारों और अनुभूतियों की साहित्य भूमिका में पलकर बडी हुई। फिलासफी में एम. ए. किया।

सुगताकुमारी बचपन से कविताएँ लिखती थीं। विद्यार्थी जीवन में ही उनकी प्रथम कविता मलयालम की प्रमुख पत्रिका 'मातृभूमि' में प्रकाशित हुई। मातृभूमि के संपादक और प्रसिद्ध कवि श्री एन. वी. कृष्ण वारियर की निरन्तर प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से सुगता जी बराबर लिखती रहीं। महाकवि जी. शंकर कुरुप, बालामणियम्मा, वैलोप्पिल्ली आदि कवियों से भी कवयित्री को प्रेरणा मिली है। पावं मानव हृदयं, मुत्तुच्चिप्पि, पातिराप्पूक्कल, इरुल चिरकुकल और रात्रिमषा उनके काव्यसंग्रह हैं। आज भी उनकी लेखनी अबाध गति से चल रही है और मलयालम साहित्य को उस अनुगृहीत लेखनी पर अभिमान है।

काव्यसंसार :— यदि कोई आधार वस्तु ऐसी है जो सुगताकुमारी के काव्य को शुरू से आज तक प्रभावित करती रही है तो वह उनकी विषादात्मकता ही है। कवयित्री के विषाद के अनेक कारण हैं। स्वातंत्र्योत्तर भारत की सामाजिक चेतना के मुख्य भाव रहे निराशा, संत्रास एवं विषाद। भारत के अधिकतर नये कवि इन भावों के प्रवक्ता भी हैं। प्रवाचक अथवा प्रवाचक-तुल्य अतिमानवों पर इस जमाने के कवियों को विश्वास नहीं है। क्योंकि उनके आदर्शों और सिद्धान्तों को उनके शिष्य या तो प्रवृत्ति में नहीं ला सकते, नहीं तो प्रवृत्ति में लाने की चेष्टा नहीं करते। वे महान तत्व जिस स्वर्ग से आये उसी स्वर्ग की ओर पंख फैलाकर उड गये, जब कि नीचे धरती पर मनुष्य निरालम्ब हो खडा रहा। विभिन्न राजनीतिक सिद्धान्त भी मनुष्य को आश्वास और आश्रय नहीं प्रदान कर सके। इस प्रकार आधुनिक विचार शील मनुष्य के सामने उसकी चेतना को आकृष्ट करने के लिए कुछ न रहा तो उसने स्वाभाविक रूप से ऐंद्रिय सुखों में डूबना चाहा। इस परिस्थिति में अपना कोई नया विचार दुनिया को देने में असमर्थ नया कवि स्वयं हाथ मलकर खडा है। वह सोचता है कि निरालम्बता, निसहायता और व्यर्थता के बोध से उद्भूत संवेदनाएँ इस युग की मानसिक पीडाओं केलिए उचित औषधियाँ बन जाएँगी। विश्वविख्यात अस्तित्ववादी साहित्यकार काफ्का ने ओस्कार पोलोक को लिखा— "हमें अपने जीवन की सबसे दुखपूर्ण घटनाओं की तरह स्पर्श करने वाली किताबों की जरूरत है। हम से भी अधिक प्यारे व्यक्तियों की मृत्यु की भाँति हमारे मन में दुख पैदा करने वाली किताबें चाहिए, जिनके पढने से ऐसा प्रतीत हो कि हम आत्महत्या के कगार पर खडे हैं, नहीं तो हमारे मन में ऐसा विश्वास उत्पन्न हो कि हम मानव समाज से अलग होकर किसी घोर वन में खो गये हों।" इस प्रकार कविता करने वाले एक कलाकार के शब्द भण्डार में शून्यता, अन्धकार, मरुस्थली, ग्रीष्म, ऊष्मा, तृष्णा, दुख, दर्द, कटुता, आहें, आंसू, रक्त, मरण, ऊपरता आदि शब्द समुद्री तरंगों की भाँति उठते गिरते रहते हैं। क्योंकि कवि के अन्तकरण की भावनाओं एवं संवेदनाओं का उचित प्रकाशन करना शब्दों का धर्म है। यह निसहायता, संत्रास विषाद और वेपथु संपूर्ण भारत के नये कवियों में देखा जा सकता है, जो मलयालम की प्रसिद्ध कवयित्री सुगताकुमारी की मुख्य भाव धारा है। राजघाट में राष्ट्रपिता के समाधिस्थल पर खडी होकर कवयित्री गाती है—

> "विमलाभ होकर
> मन्द मन्थर गति से बहनेवाली यमुने !
> तुझे देखकर मेरी आँखें भर जाती हैं।
> तेरे विशुद्ध नीर पर यह समाधिस्थल देख कर
> दिल दुखता है, हाथ जुडते हैं।
> x x x x x x
> देख, यह दयनीय सत्य है

कि आपके चरणों में गिरकर रोने के लिए भी
हम अनर्ह हैं
गुरो, आपने जो गीत हमें सिखाये थे
वे सब हम कब के भूले हैं।
(राजघट्टत्तिल : पातिराप्पूक्कल)

महात्मागाँधी के आदर्शों को पुस्तकों में बन्दकर हमने पुस्तकालयों को सजाया है। उनके शिष्य उन महान आदर्शों और सिद्धान्तों को भूले, स्वार्थी एवं दुराचारी बन गये। कोई भी राजनीतिक सिद्धान्त स्वतंत्र भारत की सतस्याओं के समाधान ढूँढने में सफल नहीं हुआ। देश की वर्तमान पतित एवं रुग्ण परिस्थितियों पर अतीव दुखी होकर कवयित्री गाती हैं—

"हमें देवों की यह आज़ादी किस के लिए ?
गंगा तीर्थ के किनारे पर
अधी हम बैठे हैं।
हमारा विफल सुधा चषक मिट्टी में गिर पडा है
यह महिमामय अमृत हमारे हाथों में
कैसे शराब बन गया ?
अतीव लज्जा के साथ हम को जानना है—
हम असुर हैं।
हाय ! हम को देवों की यह आज़ादी किसी के लिए ?
(स्वातंत्र्यम्, 1976 : रात्रिमषा)

राष्ट्रपिता से 'युग कवि' का कहना है—"आपके बेटे लंगडे गधे पर सवार होकर अपनी ही छाया पर तलवार चला रहे हैं। आप के बेटे जहाज़ों में आनेवाले भिक्षान्न के लिए भिक्षापात्र लेकर खडे हैं। जब छोटे बच्चे भूख और प्यास से चिल्लाते हैं तब आप के अमीर बेटे अन्धकूपों में खाद्यवस्तुओं को छिपाकर चोर बाज़ारी करते हैं, मिलावट की चीज़ें बेचते हैं। आपके बेटे अन्धकार की आड में अपनी माताओं को धोखा दे रहे हैं।" (हा राम! : इरुल चिरकुकल)। इस प्रकार लोक जीवन की विकलताओं, रुग्णताओं, विभीषिकाओं और मनुष्य की निसहायता पर दुखी होनेवाली कवयित्री को 'क्यू निल्क्कुन्नु अङ्गन', 'कात्तु निल्प्पु', 'कूननुरुम्बु', 'बयाफ्रा' आदि अनेक कविताओं में हम देख सकते हैं।

सुगताकुमारी के विषाद का दूसरा कारण उनकी स्वच्छन्दतावादी अन्तर्मूखता एवं वैयक्तिकता है। प्राय : सभी रूमानी कवियों में यह विषाद देखने को मिलता है। इस विषाद भाव का स्वतंत्र्योत्तर भारत की रुग्ण परिस्थितियों से कोई संबन्ध नहीं है। यद्यपि सुगताकुमारी का काव्य स्वातंत्र्योत्तर परिस्थितियों में पल्लवित हुआ है तो भी उनके व्यक्तित्व का एक भाग ही देश की सामाजिक चेतना के संत्रास से संबन्ध रखता है, दूसरा भाग उनकी व्यक्ति चेतना की खूबियों से अनुप्राजित है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक युग ने लिखा है—"जो लोग अंतर्मुख होते है उनको चेतना विषादमय रहती है। यद्यपि उनके जीवन में अधिक दुख दायक घटनाएँ न हुई हों तो भी वे सदा दुखी दिखाई देंगे। कोई अव्यक्त और आभ्यंतरिक तृष्णा सदा उन्हें पीडा देती रहेंगी।" सुगताकुमारी की 'दाहं' (प्यास) शीर्षक कविता में इसी भाव का प्रकाशन हुआ है।

दुख इस प्रकार के कवियों की आत्मा का सत्य है। अत : जब वे दुख का गायत करते हैं तब समाज के समान धर्मी लोगों के दिल उस लय में धडकने लगते हैं। ये अन्तरवृत्तिवाले कवि अपने आन्तरिक दुखों के प्रकाशन केलिए सामाजिक दुखों से कभी कभी बिम्बों को ग्रहण करते हैं। दुखों के निवारण केलिए वे बहिरवृत्ति वाले कवियों की भाँति उत्कण्ठित भी होते हैं। सुगताकुमारी की 'कोलोसस', 'बिहार' 'अभयार्थिनी' आदि कविताएँ इस संदर्भ में स्मरण करने योग्य हैं। मनुष्य की संहार-प्रवणता, स्वार्थपरता, प्रेम करने की अनमर्थता, पराधीनता अदि जब सामाजिक धर्म बन जाती हैं तब उद्भूत होने वाला दुख इन कविताओं का विषय है। दुख के कारणों का निवारण कर सामाजिक मोक्ष प्राप्त करने का प्रबल आग्रह इन कविताओं में कवयित्री प्रकट करती भी हैं। परन्तु बात यह है कि समाज यदि दुख से मुक्त हो जाए तो भी सुगता जी का दुख दूर नहीं होगा। क्योंकि वे गाती हैं—

"वृथा आनंद की हल्की धूप में परिललित,
निद्रित सरोवर के सपनों की अपेक्षा
समुद्र के तडपते दिल से
भूमि के दुख स्वप्न की तरह
निर्गलित आहें, मैं पसन्द करती हूँ।"

यही है उनकी मानसिक अवस्ता। किसी भी लौकिक सुख से प्यारा है उन्हें अपना विषाद। अपने प्यारे बच्चे की भाँति दुख को दिल से लगाकर इस प्रकार काव्य साधना करने वाले कवि मलयाम में इस युग में कम नहीं हैं। सुगताकुमारी का नाम उनमें सर्वप्रथम आता है।

विषाद के बाद सुगताकुमारी के काव्य में मुखर होनेवाला प्रमुख भाव रहस्यात्मकता एवं आस्तिकता है। उनकी 'आवाहनं', 'पातिराप्पूक्कल', 'इरुलचिरकुकल', 'निशागन्धी', 'सन्ध्या', 'अक्यक्कु तमसिल आन' आदि अनेक कविताएँ इस श्रेणी में आती है। दृश्य जगत् के पीछे अवस्थित रहस्य चेतना का उन्हें योध होता है और उसके प्रति आकर्षित होकर वे भावविभोर हो गाती हैं—

"कितने मेरे हाथों में यह मिट्टी की वीणा दी !
और भन में दुख बोया।
किसने मेरी आँखों में आँसू
मत में मृदु स्वर,
अधीर तथा भूक अधरों में गान भरे
और इस पथ पर लाकर विदा की ?
(इरुल चिरकुकल)

रहस्यवादी भावचेतना के प्रारंभ की अवस्था है यह जिज्ञासा और कुतूहल। उस परम सत्य के अन्वेषण में भटकने वाली आत्म का

मार्मिक अंकन कवयित्री की 'मुत्तुच्चिप्पी' (सीपी) शीर्षक कविता में हुआ है। सीपी आत्मा का प्रतीक है। समुद्र के अथाह तलों में सत्य को ढूँढने का वर्णन सीपीयों करता है—

> "तडप कर, फिसल कर समुद्र की गहराई में
> रत्नों की बडी बाँबियों के बीच से
> x x x x x x
> शीतल निर्मल, हरिताभ जल की ओर में
> जीव-शतों के सात में भटका,
> अन्धेरे में आगे बढा।" (मुत्च्चिप्पी)

आखिर किसी अज्ञात दुख से प्रेरित होकर सीपी समुद्र के ऊपरी तल पर आता है, उसके इन्द्रियों का द्वार खुलता है और मन किसी की प्रतीक्षा में आकुल होता है। परन्तु चारों ओर सूर्य की अरुण किरणों के लगने से चमकनेवाली जलबिन्दुओं का वर्ण-प्रपंच देखकर वह अपनी आध्यात्मिक व्यथा भूल जाता है। अचानक एक वर्षाबिन्दु सीपी के लुँह में गिरती है और तुरन्त लुँह बन्द होता है। फिर सीपी एक सुदीर्घ निद्रा में डूब जाता है। फिर उसके दुख मिटे, अहंभाव मिटा और मन एक द्वन्द्वातीत अवस्ता में पहूँच गया।

> "नहीं होंगे आगे
> चारों ओर मन का आकुल गर्जन,
> समुद्री लहरें, भय
> आनन्दोल्लास की आवाज।" (मुत्तुच्चिप्पी)

प्राकृतिक प्रतीकों के सहारे आत्मा और परमात्मा के मिलन की मोहक व्यंजना यहाँ हुई है। सीपी जीवात्मा का प्रतीक है और आकाश की वर्षा विन्दु परमात्मा का दोनों के मिलन से उद्भूत अद्वैत अवस्था का प्रतिपादन ऊपर की पंक्तियों में हुआ है। इस प्रकार रहस्यवाद का पूर्ण परिपाक इस कविता में देखने को मिलता है।

प्रेम भावना का भव्य एवं प्रभावात्मक अंकन सुगताकुमारी के काव्य कीं एक प्रमुख विशेषता है। वासना निर्लिप्त, पवित्र एवं स्वस्थ प्रणय का सुन्दर चित्रण उन्होंने अपनी कविताओं में किया। भारतीय कवियों केलिए राधा और कृष्ण विरह के शाश्वत प्रतीक है। सुगताकुमारी ने भी अपनी 'कृष्णने-तेडी' (कान्हा की खोज में) और 'ओरु निमिषं' (एक निमिष) नामक कविताओं में इन अदिबिंबों का प्रयोग किया है। इन कविताओं में नव्यता और सौंदर्य भरने में कवयित्री को प्रशंसनीय सफलता मिली। राधा और कृष्ण की तरह भारतीयों के लिए कलिदास का दक्ष भी विरह के तीव्र दुख का प्रतीक है। 'मेघ संदेश' नामक कविता में कवयित्री ने इसी प्रतीक का सफल प्रयोग किया। उनका यक्ष मजदूर है और झोंपडी में रहता है। वह सडक के किनारे बैठकर बादल से प्रार्थना करता है—"बादल, एक निमिष तू वहाँ खडे रहे तो तुझसे मिलने मेरी प्राण प्यारी वह आयेगी, आँसू भरे नयनों से देखते हुए सामने खडी हो जाएगी। तब तुझ मन्द्रमधुर दो शब्द कहते चाहिए—

> "दूसरे लोग मेघ गर्जन समझ बैठेंगे,
> केवल वह जानेगी कि वे मेरे हृदय के स्पन्दन हैं।"

उसके चरणों में दो बूंद आँसू गिराने हैं—

> "दूसरे लोग समझ बैठेंगे बारिश है.
> केवल वह जानेगी, वे मेरी आत्म के अश्रुकण हैं।"

कहने का सन्देश वह पुराना ही है—

> "मेरा विचार कर प्राण-प्यारी ! दुखी मत हो
> तेरी पावन स्मृति में मैं जी रहा हूँ।"

पुराने काव्य प्रसंग को लेकर काल के अनुसार नये भाव और रूप प्रदान करने में कवयित्री यहाँ पूर्ण रूप से सफल हुई है। देक अन्य कविता में प्रेम की स्वर्गीय अनुभूति का प्रकाशन उन्होंने यों किया—

> "नक्षत्र की तरह एक मात्रा का स्पन्दन,
> बस, मुझे लगा
> आसमान नीचे उतर आया,
> धरती लहर बन मेरे पौरे तले नले दौड आयी,
> तारे मुट्ठी भर फूल बन मेरी धाती पर बिखरे।
> मुझे लगा
> मैं एक हवा बन गयी
> किसी उत्कट, सुरभित मूर्छा में घुलने लगा,
> और घुल कर नष्ट हुआ
> अब भी वह एक मात्रा,
> फिर काल का अस्तित्व नहीं।"

सुगताकुमारी के प्रेम काव्य की चर्चा करते हुए प्रसिद्ध कवि एन. वी. कृष्णवारियर ने लिखा—"काल को भी पराजित करनेवाली प्रेम की स्वर्गीय अनुभूति, दुख को भी गंगातीर्थ बना देने वाले प्रेम की सार्वभौमता की यह गंभीर घोषण जब तक मलयालम कविता होगी तब तक गूँजती रहगी।"

अपत्य वात्सल्य का मार्मिक प्रतिपादन करनेवाली कुछ कविताएँ भी सुगताकुमारी ने रची हैं। धन्यता, सन्ध्या, मातृदर्शनं आदि कविताएँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

पुराण कथाओं का पुनराविष्कार कर उन्हें नये अर्थ और मान प्रदान करने का सफल प्रयत्न भी सुगताकुमारी ने अपनी कतिपय कविताओं में किया है। 'गजेन्द्र मोक्ष' और 'कालिय मर्दन' इस प्रकार की दो कविताएँ हैं। 'गजेन्द्रमोक्ष' के पौराणिक बिम्ब को ग्रहण कर कवयित्री ने लंबी बीमारी से तडप तडप कर मृत्यु के गर्त में डूबने वाली आत्मा का प्रभावात्मक चित्रण किया है। मनुष्य के दुखानुभव और उनके द्वारा आत्मशुद्धि प्राप्त करने के बारे में 'कालियमर्दन' के बिंब को स्वीकार कर कवयित्री ने एक भावचित्र प्रस्तुत किया। यहाँ कालिय को पीडानुभव में बडा आनंद होता है। यहाँ विष को घर कालिय मानवात्मा का प्रतीक है जो स्वयं पददलित होकर, विष को अश्रुरूप में वहा कर, दर्प खोकर पीछे हटता है;

का उपकरण समझ कर जीने के अपने जन्माधिकार पर विश्वास करता है ।

सुगताकुमारी का साहित्यक लक्ष्य अस्तित्ववादी विचारों के अनुकूल है । पिछले युग के काव्यादर्श के विरुद्ध वे सोचती हैं कि काव्य किसी सामाजिक उद्देश्य को पूरा करने काउपकरण नहीं है, साहित्य का कोई सामाजिक लक्ष्य ही नहीं है । कविता का उद्देश्य जीवन को अधिक स्पष्ट, अगाध और प्रभावात्मक रूप से प्रकाशित करना मात्र है । स्वयं कवयित्री ने इस बारे में यों लिखा—"एक फूल खिलता है. ठीक उसी प्रकार एक कविता जन्म लेती है । किसी परिनिष्ठत उद्देश्य के बिना, किसी निश्चित लक्ष्य के बिना, अमरता के मोह के बिना ऐसा होता है । फूल को खिलना है, पक्षी को गाना है, छुईमुई को मुर्झाना है, लहरों को उठकर गिरना है । ठीक उसी प्रकार उतनी ही स्वाभाविकता के साथ, ईमानदारी के साथ मैं लिखती हूँ ।" (इरुलचिरकुकल का आमुख : पृ. 4)

सुगताकुमारी का, भावसंप्रेषण का माध्यम भी कम प्रभावात्मक नहीं रहा । प्रतीकों और बिम्बों के द्वारा सूक्ष्म से सूक्ष्मतर भावों बहुत कम प्रयोग किया । जहाँ तक उनका प्रयोग हुआ, भाव का प्रभाव वर्द्धन ही लक्ष्य रहा । संस्कृत छन्दों को छोडकर मलयालम के लोकगीतों में प्रचलित द्राबिड छन्दों को उन्होंने अपनाया । मुक्त छन्दकी अनेक कविताएँ उन्होंने रचीं जिन मेंताल, लय के संगीतमय सन्निवेश करने में वे सफल हुई । छन्दों के अनेक नये प्रयोग कर गतानुगतिकता के नीरस घेरे से मलयालम कविता को उन्हों ने मुक्त करना चाहा । एक ही कविता में भावपरिवर्तन के अनुरूप छन्दों में भी रोचक परिवर्तन किये । 'बयाफ्रा' शीर्षक प्रगीत में तीन छन्दों का प्रयोग हुआ है । शब्दों का अर्थसामरथ्य तोल तोल कर उन्होंने पंक्तियों में रखा । कम शब्दों में अधिक अर्थ भरने कीं अर्थ संवहन क्षमता उनकी भाषा की खूबी है । इस वजह से कभी कभी सुगताकुमारी की कविता साधारण पाठक के लिए दुरूह बन जाती है । अर्थात् उनकी सभी कविताओं का सभी लोग आस्वादन नहीं कर सकते । आधुनिक काव्य बोध से परिचित विश्व पाठक ही सुगताकुमारी के काव्य को सही रूप में समझ सकता है ।

नकाब उतारो

K. PRABHAKARAN, III B.Sc., Chemistry

कौन हो तुम ?
इस उपवन के अनजान में विचरनेवाला
तुम कौन हो ?
आधी रात निकलने, सूरज जैसे
तुम इस समय कहाँ से आये ?
कलियों को चक्कर में डाला,
कुसुमों के दल चकित हुए,
भ्रमरों की आँखों में थकान झलकती,
लुट गया उनका गुंजार,
हवा की शतलता भी गयी कहाँ ?

नवक कलियाँ खिलने को आतुर
तब मैं तुझे समझने की चेष्टा में
पर पराजित हूँ ।
अब भी ज़रा नकाब उतारो
छोड़ दो यह अभिनय
उपवन का भ्रम मिट जाए
कुसुमों की आँखों में उजियाला चमके
कलियों की मृदुल पलकें खुल जाएँ
नकाब उतारो, मुझे दिखाओ ।